RESEARCH REVIEW JOURNALS
Volume-04
Issue-12
December -2019

ISSN: 2455-3085 (Online)
RESEARCH REVIEW International Journal of Multidisciplinary
www.rrjournals.com[Peer Reviewed Journal]

नक्सलवाद : आंदोलन से अवसाद तक

दीपा कुमारी

अतिथि व्याख्याता राजनीति विज्ञान विभाग, के. पी. महाविद्यालय, मुरलीगंज, BNMU मधेपुरा

ARTICLE DETAILS

Article History
Published Online: 16 Dec 2019

Keywords
मानवाधिकार, उग्रवाद, हिंसा, समानता, आंदोलन, विचारधारा, जमींदारी प्रथा, जनकल्याण, आदि।

ABSTRACT

देश की आंतरिक सुरक्षा के संदर्भ में श्नक्सलवादश सर्वाधिक चर्चित मुद्दों में से एक है, जिसकी शुरुआत वर्ग संघर्ष की विचारधारा के रूप में हुई। भारत में नक्सलवाद को वामपंथी उग्रवाद या माओवाद के नाम से भी जाना जाता है। सर्वहारा वर्ग के हितों की रक्षा एवं अधिकारों की मांग को केंद्र में रखकर यह आंदोलन अस्तित्व में आया और इसने अपने उद्देश्यों की पूर्ति के लिए हिंसात्मक व आक्रामक गतिविधियों को अपना अस्त ंबना लिया। प्रस्तुत शोध आलेख में नक्सलवाद के प्रादुर्भाव, विकास, स्वरूप में परिवर्तन, प्रभाव, वर्तमान स्थिति तथा इस संदर्भ में सरकार के प्रयास एवं भविष्य की संभावना पर चर्चा की गई है तथा यह समझने का प्रयास किया गया है कि मानव सभ्यता के लिए इस अभिशाप का समाधान क्या हो सकता है?

भूमिका – 21वीं शताब्दी का दूसरा दशक समाप्त होने को है और अब तक यह संकेत काफी स्पष्ट हो चुके हैं कि वर्तमान सामाजिक – राजनीतिक व्यवस्था में श्नक्सलवादश एक बहुत ही गंभीर एवं संवेदनशील समस्या के रूप में सामने आ रहा है। इस बात को नजरअंदाज नहीं किया जा सकता कि नक्सलवादी घटनाओं ने बड़े ही नाटकीय और निर्णायक ढंग से मानवीय जीवन के हरेक पहलू को प्रभावित किया है। अनेक सामाजिक विश्लेषकों का यह सोचना स्वाभाविक है कि मानव जाति की मुक्ति का बिगुल बजाने वाला तथा मानवाधिकार के नाम पर हिंसक और नृशंस गतिविधियों को अंजाम देने वाला यह उग्रपंथी समूह आज समाज के लिए चुनौती बन गया है।

नक्सलवाद का प्रारंभ एवं विस्तार – भारत में नक्सलवादी गतिविधियों के संदर्भ में पहला मामला उस समय संज्ञान में आया जब सीपीआई की किसान सभा ने बंगाल में कृषि संबंधित श्तेभागाश आंदोलन प्रारंभ किया, वर्ष था 1946। इसके बाद वर्ष 1967 में पश्चिम बंगाल के दार्जिलिंग जिले के नक्सलबाड़ी गांव में किसानों के विप्लव में नक्सलवाद को उदित किया।[1] इसी गांव के नाम पर इस उग्रवादी आंदोलन को नक्सलवाद का नाम दिया गया तथा यहीं से इस आंदोलन की औपचारिक शुरुआत मानी गई। चारू मजूमदार और कानू सान्याल जैसे घोर कम्युनिस्ट नेताओं ने इस आंदोलन को नेतृत्व प्रदान किया तथा कम्यूनिस्ट क्रांतिकारियों की एक श्अखिल भारतीय समन्वय समितिश का गठन किया। इन नेताओं ने भारतीय किसानों, मजदूरों एवं दलित वर्गों की दुर्दशा के लिए सरकार की नीतियों को जिम्मेदार ठहराया और कहा कि इन नीतियों की वजह से उच्च वर्गों का शासन तंत्र पर वर्चस्व स्थापित हो गया है। अतः इस न्यायहीन दमनकारी वर्चस्व को खत्म करने के लिए सशस्त्र क्रांति ही एकमात्र उपाय है तथा इस सशस्त्र क्रांति को औचित्यपूर्ण बताते हुए यह माना कि श्नक्सलवादश सामाजिक व्यवस्था के पुनर्निर्माण के लिए उग्रपंथी विचारधारा की परिणति है, जिसका उद्देश्य सर्वहारा वर्ग की गरीबी, विपन्नता, असमानता और समाज में व्याप्त न्यायहीनता को दूर करना है।

1969 ईस्वी में अखिल भारतीय समन्वय समिति ने श्भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी (मार्क्सवादी – लेनिनवादी) का गठन किया, जिसके प्रेरणास्रोत मार्क्स, लेनिन व माओ थे।[2] सीपीआई का पहला सम्मेलन 1970 ईस्वी में कोलकाता में हुआ। देशभर में फैले लगभग सभी नक्सलवादियों का संबंध किसी–न–किसी रूप में सीपीआई (एम एल) से बताया जाता है।

1972 ईस्वी में चारू मजूमदार की मृत्यु के बाद पार्टी दो भागों में बंट गई – सीपीआई एमएल (पी डब्ल्यू जी) तथा एमसीसी। अब आंध्र प्रदेश नक्सलवादी गतिविधियों का केंद्र बन गया तथा जल्दी ही तेलंगाना सहित राज्य के अधिकांश जिलों में नक्सलवादी आंदोलन का प्रसार हुआ। 1980 ईस्वी में आंध्र प्रदेश में कोंडापल्ली सीतारमैय्या के द्वारा पीपुल्स वार ग्रुप (PWG) का गठन किया गया। 1980 से 2004 के बीच नक्सलवाद का व्यवहारिक विकास हुआ तथा इनके प्रभाव एवं विस्तार में तेजी आई। इस दौरान भारत के लगभग 15 राज्यों के 175 जिले, जिसमें बिहार, झारखंड, उड़ीसा छत्तीसगढ़, मध्य प्रदेश, आंध्र प्रदेश सबसे ज्यादा नक्सल प्रभावित क्षेत्र बने।[3] 1986 में सीपीआई ने श्राष्ट्रीय महिला संगठनश की स्थापना की। इस दौर में नक्सलवाद को रोकने के उद्देश्य से सरकार ने भी अपनी प्रतिबद्धता जाहिर करना शुरू किया। वर्ष 1986 में बिहार के पीडब्ल्यूजी और एमसीसी पर प्रतिबंध लगा दिया गया। सन् 1993 में आंध्र प्रदेश के तत्कालीन मुख्यमंत्री एन टी रामाराव ने पीडब्ल्यूजी पर प्रतिबंध लगा दिया। इसकी प्रतिक्रिया में पीडब्ल्यूजी ने माओ की श्रेड बुकश की नीति के तर्ज पर गुरिल्ला युद्ध (छापामार युद्ध) को तेज कर दिया तथा 2000 में आंध्र प्रदेश, बिहार व झारखंड में पीडब्ल्यूजी की मिलिट्री विंग श्पीपुल्स गुरिल्ला आर्मीश(PGA) का गठन

RRIJM 2015, All Rights Reserved

किया।[4] 1995 में नक्सलवादी आंदोलन का प्रचार छत्तीसगढ़ में हुआ। सरकार को चुनौती देने के उद्देश्य इस समूह ने अपनी एक समानांतर सरकार की स्थापना की तथा सरकारी नीतियों के खिलाफ आक्रामक रवैया अपनाया।

सन् 2004 के बाद नक्सलवाद की रणनीति में एक नया मोड़ तब आया जब पी डब्ल्यू जी तथा एम सी सी ने आपसी विलय कर सीपीआई (माओवादी) गुट का गठन किया। नक्सलवादी विचारधारा व गतिविधियों का प्रसार अब अंतर्राष्ट्रीय हो गया है। नेपाल, श्रीलंका, बांग्लादेश, ब्राजील, फिलिपिंस, मेक्सिको जैसे देशों में इन संगठनों की जड़ें देखने को मिल रही है। नक्सलवादी संगठनों को चीन व पाकिस्तान जैसे राष्ट्रों के सहयोग ने इसे और भी जटिल बना दिया है। अब नक्सलवाद राष्ट्र की सबसे बड़ी आंतरिक समस्या बनकर उभरा है, जो भारत की संसदीय व्यवस्था को ही उखाड़ फेंकने के लिए आमादा है।

सन् 2005 में नक्सलवादियों ने श्ऑपरेशन जेल ब्रेकश के तहत जहानाबाद जेल पर आक्रमण किया, जिसका उद्देश्य प्रमुख नक्सली नेता अजय कानून को जेल से मुक्त कराना तथा अपनी गृह भूमि गया – जहानाबाद क्षेत्र में अपनी उपस्थिति का एहसास कराना था।[6]

इस ऑपरेशन में 1000 से भी ज्यादा नक्सली शामिल थे।

नक्सलवाद उग्र विचारधारा की पृष्ठभूमि पर भले ही आधारित है लेकिन मूल रूप से यह अलगाव वाद या आतंकवाद नहीं है क्योंकि देश की आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक व प्रशासनिक व्यवस्था में आमूलचूल परिवर्तन करना तथा समानता पर आधारित समाज की स्थापना करना इनका दूरगामी लक्ष्य है।

नक्सलवाद का सामाजिक आधार – दरअसल नक्सलवादी आंदोलन के प्रारंभ एवं विस्तार के लिए व्यक्ति ही नहीं बल्कि सामाजिक व्यवस्था तथा सरकारी नीतियां भी जिम्मेदार है। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् भारत के प्रथम प्रधानमंत्री पंडित जवाहरलाल नेहरू ने गरीब बेसहारा किसानों, मजदूरों, महिलाओं, शारीरिक रूप से अशक्त लोगों तथा बच्चों के आंखों से आंसू पोंछने का वादा किया परंतु समाज के कुछ बिचौलियों और जमींदारों ने सरकारी योजनाओं का लाभ इन वर्गों तक पहुंचने ही नहीं दिया। इस वजह से आजादी का अनुभव करने से पूर्व ही ये दीनहीनज्ञलोग पुनः जंजीरों में जकड़ते चले गए और जमींदारों व सूदखोरों ने इनकी बेबसी का लाभ उठाकर इनका भरपूर शोषण किया। समाज के इस बहुसंख्यक वर्ग को अब भी अपने मूलभूत अधिकारों को पाने के लिए संघर्ष करना पड़ रहा था। समाज में व्याप्त कुरीतियों एवं थोपी गई प्रथाओं के दलदल से बाहर निकलने का इनका सपना, सपना ही रह गया। सरकार ने जमींदारी प्रथा के उन्मूलन तथा भूमि सुधार संबंधी कानून जरूर बनाए लेकिन इसे लागू करने में बहुत अनियमितताएं हुई। कई जगहों पर ताकतवर भू स्वामियों ने गरीब भूमिहीन लोगों को उनके अधिकार का लाभ नहीं लेने दिया। न्यूनतम मजदूरी की घोषणा के बावजूद भी किसानों तथा मजदूरों को कम मजदूरी दिया जाता था। छुआछूत विरोधी कानून बनाए जाने के बावजूद भी समाज के उच्च वर्गों के धनाढ्य लोगों द्वारा वंचित वर्गों के साथ अमानवीयपूर्ण भेदभाव किया जा रहा था। इन परिस्थितियों में स्वाभाविक है कि उग्रवादी संगठनों को अपना प्रभाव जमाने का मौका मिला तथा यह संगठन असंतुष्ट भूमिहीनों, बेरोजगारों, शोषितों को न्याय दिलाने के नाम पर संगठन में शामिल करने लगे। भारत में नक्सलवादी आंदोलन पर सोवियत रूस और चीन की साम्यवादी विचारधारा का व्यापक प्रभाव पड़ा क्योंकि यह क्रांतियां सर्वहारा वर्ग के हितों की रक्षा तथा कल्याण की बात कर रही थी। हालांकि सोवियत रूस और चीन की साम्यवादी विचारधारा में अंतर होने के कारण भारत के विभिन्न क्षेत्रों में फैले नक्सली संगठनों की विचारधारा में भी अंतर देखने को मिलता है। भारत में अधिकांश नक्सलवादी संगठन माओवादी विचारधारा के समर्थक हैं।[6]

चुंकि नक्सलवादी गतिविधियों के पनपने तथा फलने – फूलने में वन क्षेत्रों की महत्वपूर्ण भूमिका है इसलिए जब सरकार ने वन क्षेत्रों के प्रबंधन के लिए नीतियां बनानी शुरू की तो इन संगठनों ने इसका भारी विरोध किया। इन संगठनों ने सरकार पर वन क्षेत्रों का कुप्रबंधन करने का आरोप लगाया तथा इसके विरोध में अपनी गतिविधि तेज कर दी। इस वजह से भी भारत के विभिन्न क्षेत्रों में नक्सलवाद का प्रसार हुआ। वर्तमान समय में भारत के कुल वन क्षेत्र के लगभग 19 प्रतिशत भाग पर नक्सलवादी संगठन अपना नियंत्रण जमाए हुए हैं। इन नक्सलियों ने वन, विस्थापन एवं जनजातिय स्वशासन जैसे मुद्दों को उठाकर देश के विभिन्न क्षेत्रों में अपना प्रभाव जमाया है। सरकार द्वारा खाद्य सुरक्षा उपलब्ध कराने की विफलता, बढ़ती आंतरिक भिन्नता, उद्योग धंधों के विकास के लिए वनों की अंधाधुंध कटाई और वैश्वीकरण की प्रक्रिया ने इस संघर्ष को और भी बढ़ा दिया है।

यहां यह भी उल्लेखनीय है कि मानवाधिकारों का खुला उल्लंघन, जातिगत विषमता, व्यक्ति की गरिमा का हनन, नारी अस्मिता का प्रश्न, आदिवासी समुदाय का समाज की मुख्यधारा से अलगाव, प्रशासनिक अक्षमता एवं भ्रष्टाचार जैसी समस्याओं ने नक्सलवादी आंदोलन के हिंसक स्वरूप को बढ़ाने में मुख्य भूमिका निभाई है। विगत दशकों में नक्सल प्रभावित क्षेत्रों में गरीबी एवं बेरोजगारी की समस्याओं को दूर करने के लिए बनाई गई सरकारी नीतियों की विफलता के कारण नक्सलवाद ने सरकार विरोधी व राष्ट्र विरोधी स्वरूप को अपना लिया है। सरकार की नीतियों से असंतुष्ट तथा आर्थिक असमानता से क्षुब्द लोग कानून को अपने हाथ में लेने

RRIJM 2015, All Rights Reserved

से भी नहीं कतराते श्चक्रव्यूहश जैसी लोकप्रिय फिल्में इसी असंतुष्ट जन – भावना को चित्रित करती है।

नक्सलवादी आंदोलन का वर्तमान परिदृश्य – श्नक्सलवादश शब्द का जिक्र आते ही आतंक, क्रूरता, हिंसा, अत्याचार जैसी जघन्य घटनाओं का खौफ हमारे मन – मस्तिष्क में घर कर जाता है। इन संगठनों के कारनामों के प्रति अनायास ही नकारात्मक विचार व्यक्त करने से हम स्वयं को रोक नहीं पाते हैं। आखिरकार समाज के दबे – कुचले शोषित वर्गों के हक एवं हितों की लड़ाई लड़ने वाले इन संगठनों के प्रति सरकार भी सख्त कानून बनाने के लिए क्यों मजबूर हो जाती है तथा वर्तमान सामाजिक व्यवस्था व मानव अस्तित्व के लिए इसे खतरा क्यों बताया जा रहा है? ऐसे सवालों के लिए इन उग्रपंथी संगठनों के कृत्य एवं नीतियां ही जिम्मेदार हैं। भारत में नक्सलवादी आंदोलन की शुरुआत एक ऐसी व्यवस्था के निर्माण के लिए हुई थी, जो सामाजिक – आर्थिक न्याय पर केंद्रित हो और जिसमें समाज के किसी भी वर्ग की उपेक्षा न की जाती हो परंतु अब उनका मकसद बदल गया है। यह समूह अपने प्रभाव को बढ़ाने तथा लोगों पर वर्चस्व स्थापित करने के लिए अकारण हिंसा, अपराध एवं उपद्रव का सहारा लेने लगे हैं।[7] यह लोग माओवादियों के साथ मिलकर देश के अर्थ तंत्र को कमजोर करने का भी प्रयास कर रहे हैं।

सरकारी आंकड़ों के मुताबिक हाल के दिनों में नक्सली हिंसा के कारण आतंकी हमलों से भी ज्यादा लोग मारे गए हैं तथा छत्तीसगढ़, बिहार, उड़ीसा, झारखंड आदि क्षेत्रों में नक्सली वारदातों में भारी इजाफा हुआ है। धीरे–धीरे नक्सलवाद अमानवता का पर्याय बनता जा रहा है। जनकल्याण एवं मानवाधिकारों की रक्षा का दावा करने वाले ये गुट अब स्वयं मानवाधिकार का उल्लंघन करने लगे हैं। यहां तक कि ये महिलाओं एवं बच्चों के साथ भी घृणित अपराध करने से नहीं कतराते। इस संदर्भ में झारखंड की आदिवासी महिला नक्सली गीता कोड़ा ने जो आपबीती बताई है,यह इन संगठनों के नैतिकता पर प्रश्न है।[8] आज देश के प्रमुख नक्सलवादी संगठनों एवं इसके नेताओं को राजनीतिक समर्थन प्राप्त हो रहा है, जिसकी सहायता से ये लोग कानून व्यवस्था को ताक पर रखकर मानव तस्करी, नशा खुरानी, लूटपाट जैसे जघन्य घटनाओं को अंजाम देते हैं। अपराध और राजनीति का गठजोड़ नक्सलवादी संगठनों को एक नई भूमिका प्रदान करता है। अपने राजनीतिक लाभ के लिए न सिर्फ वामपंथी वरन् सभी राजनीतिक दल और उसके क्षेत्रीय नेता नक्सलियों से गठजोड़ करते हैं, जिसका सीधा असर सरकारी योजनाओं के क्रियान्वयन पर पड़ता है।[9] सोचनीय पहलू यह है कि नक्सलवादी आंदोलन विचारधारा के अवसान की ओर है। इसकी नई पहचान क्षेत्रीय प्रभुत्व, निजी स्वार्थ, अपराध एवं धन की लालसा बन गई है। नक्सलवादी आंदोलनों के इस नवीन पहचान से नित नए तत्व जुड़ते जा रहे हैं। सरकारी एवं गैर सरकारी आंकड़ों के अनुसार कई बड़े नक्सली नेताओं के बच्चे और परिवार के अन्य सदस्य बड़े शहरों में आलीशान बंगलों में रह रहे हैं, देश एवं विदेश के बड़े शिक्षण संस्थानों में अध्ययन कर रहे हैं तथा बड़ी–बड़ी औद्योगिक संस्थाओं के संचालक बने हुए हैं। गरीबों के हितों की बात करने वाले इस संगठन के कई संचालकों का गरीबी से कोई वास्ता नहीं है। समाज के कुछ तथाकथित बुद्धिजीवी वकील, प्रोफेसर, डॉक्टर, व्यापारी, उद्योगपति, सामाजिक कार्यकर्ता का इन नेताओं से सहानुभूति चिंता की नई कहानी बयां करता है। ये तथाकथित बुद्धिजीवी वर्ग प्रत्यक्ष तौर पर नक्सली हिंसा में शामिल तो नहीं है परंतु ये उनके नीतियों का समर्थन, संगठनों को आर्थिक सहायता, संगठनों के लिए वैचारिक प्रसार और लेवी वसूली के लिए संभावित विकल्पों की जानकारी में सहायक है।[10]

नक्सलवादी आंदोलन की यह नवीन पहचान एक सभ्य समाज के लिए चुनौती है। केंद्र एवं राज्य की सरकारें इस गठजोड़ को तोड़ने के लिए लगातार प्रयास कर रही है परंतु उचित यह भी होगा कि सरकार को इन तथ्यों पर भी विचार करना चाहिए कि समाज का कमजोर वर्ग इन संगठनों के झांसे में क्यों आ जाता है और सरकार इस वर्ग को नक्सली गतिविधियों से विमुख करने के लिए क्या कर सकती है। साथ ही नक्सलवादी विचारधारा की प्रतिक्रिया में शांति और सद्भाव की विचारधारा को कैसे आगे बढ़ाया जा सकता है।[11] इन योजनाओं पर भी सरकार को त्वरित भूमिका का निर्वहन करना होगा। सरकार को चाहिए कि बुद्धिजीवियों का एक वर्ग खड़ा करे, जो नक्सलवादी संगठनों को तार्किक चुनौती प्रदान कर सके। साथ ही सामाजिक असमानता, अल्प विकास, भूमि एवं जल प्रबंधन, भ्रष्टाचार और अमानवीयता के विरुद्ध कड़े कदम उठाए। आशा की जानी चाहिए कि सरकार के सकारात्मक प्रयासों से समाज को नई दिशा मिलेगी क्योंकि हिंसा किसी समस्या का समाधान नहीं हो सकता।

संदर्भ सूची –

1. सिंह, प्रकाश – भारत में नक्सलवादी आंदोलन, प्रकाशन वर्ष – 2006, पेज नं. – 102
2. शाह, अल्पा – नाईटमार्च: ए जर्नी इनटू इंडियाज नक्सल हर्टलैंड्स, प्रकाशन वर्ष – 2018, पेज नं. – 188

3. राय, डॉ. राकेश – सोशल ट्रांसफॉरमेशन ऑफ नक्सल अफेक्टेड एरियाज : ए सोशियोलॉजिकल स्टडी, प्रकाशन वर्ष – 2018, पेज नं. – 232
4. नारायण, एस. – नक्सलिज्म एंड माओइज्म इन इंडिया, प्रकाशन वर्ष – जून 2014, पेज नं. – 132
5. रॉय, अरुंधति – वाकिंग विद द कॉमरेड्स, प्रकाशन वर्ष मई – 2011, पेज नं. – 172
6. राय, रविंद्र – नक्सलवाद और उनकी विचारधारा, प्रकाशन वर्ष – 2014, पेज नं. – 246
7. चित्रलेखा – ऑर्डिनरी पीपुल, एक्स्ट्रा ऑर्डिनरी वायलेंस, प्रकाशन वर्ष – 2012, पेज नंबर – 211
8. लाहिरी, झुंपा – द लोलैंड, प्रकाशन वर्ष – सितंबर 2013, पेज नं. – 118
9. अहलूवालिया, वी. के. – रेड रिवॉल्यूशन 2020 एंड बियोन्ड, प्रकाशन वर्ष – 2015, पेज नं. – 210
10. सिंह, डॉ. वीरेंद्र श्बघेलश – नक्सल हिंसा : एक जन संघर्ष का भटकाव, प्रकाशन वर्ष – 2015, पेज नं. – 191
11. मेहरोत्रा, संतोष – काउंटरिंग नक्सलिज्म विद डेवलपमेंट : चौलेंजेज ऑफ सोशल जस्टिस एंड स्टेट सिक्योरिटी, प्रकाशन वर्ष – 2014, पेज नं. –63

RRIJM 2015, All Rights Reserved